International Journal of Multidisciplinary Allied Research Review and Practices
IJMARRP ISSN No: 2455-1570 (Volume 3, Issue 4, May 2016)

वसुधैव कुटुम्बकम की संकल्पना में आधुनिक हिन्दी साहित्य का भावनात्मक सम्बन्ध

Dr. Rafik
Extension Assistant Prof., Department of Hindi
Govt.College Nagina-Mewat-Haryana

<u>विषय वस्तु</u>

आज के जीवन में बढ़ती हुयी व्यावसायिक प्रवृत्ति का सामाजिक सम्बन्ध पर बहुत दुष्प्रभाव पड़ा है। कम समय में अधिक से अधिक सम्पत्ति अर्जित करने की होड़, स्वार्थपरता, भोगपरक जीवन शैली, अनाचार, अत्याचार व अन्याय को बढ़ावा दे रहे हैं। इसे सब दुष्परिणामों से बचने के लिए हमें पुनः संस्कृति के अमृत तत्व को आधार मानकर उस पर चलना श्रेयस्कर है।

अन्याय के विरूद्ध संघर्ष का एक अहिंसक साधन हमें महात्मा गांधी ने सत्याग्रह के रूप में दिया और भारत की स्वतंत्रता प्राप्ति के लिये उसका सपफल प्रयोग भी किया। यह अहिंसा भारतीय मूल्य का अन्याय के विरूद्ध संघर्ष के लिए विनियोजन करने का सुन्दर उदाहरण है। इस उच्च आदर्श को नरेन्द्र शर्मा जी गांधी जी को जीवन दृष्टि द्वारा व्यक्त करते हैं–

सबका सुख ही स्वांत सुख है, हुआ सत्य का दर्शन
व्यष्टि समष्टि, स्व पर, करता मन सीमा का उल्लंघन।
सीमोल्लंघन किया, स्वयं कोयम–नियमों में बांधा
जागा अद्वय–भाव हृदय में, सेवा धर्म सनातन।।

प्रस्तावना

आज मानवाधिकार विश्व चिन्तन का प्रमुख विषय है। जिसका केन्द्र बिन्दु मानव मूल्य है। सम्पूर्ण विश्व एक मानव परिवार के रूप में मान्य है जो कि भारतीय संस्कृति के अन्तर्गत 'वसुधैव कुटुम्बकम' के अन्तर्गत प्राचीन काल से स्वीकार्य है। मनुष्य होने के नाते मान मर्यादा के साथ जीना मानव का मूलभूत नैतिक गुण है। यही नैतिक गुण स्पष्ट रूप में मानवाधिकार है। मानव मूल्य को धारण करने वाला चाहे किसी देश या काल में हो, सर्वत्र सम्मान्य होता है क्योंकि वह कभी किसी का अहित नही करता वैदिक वाडमय हमें मानव कल्याण की भावना की ओर अग्रसर करता है। साहित्य सामाजिक सन्दर्भ में मानवीय अनुभवों से सिक्त अभिव्यक्ति है। उसका प्रयोजन क्षुद्र व्यक्ति स्वार्थ के धरातल से

ऊपर उठकर विश्वमानव का हित चिन्तन करना, व्यक्ति को अपने अधिकारों के प्रति जाग्रत करना और समता, बन्धुत्व की भावना से युक्त मानवीय गुणों को व्यवहार में लाने के लिए प्रेरित करना है। आधुनिक युग में सबसे महत्त्वपूर्ण समस्या है युद्ध और शान्ति की। युधिष्ठिर महाभारत के युद्ध के परिणामों की चिंता से ग्रस्त हैं। उनकी चिंता का कारण विजय के पीछे बिछा हुआ ध्वंश और विनाश का संशय है। भीष्म पितामह के पास जाकर वे मर्मस्पर्शी शब्दों में अपनी हृदय वेदना को व्यक्त करते हैं–

''जानता हूँ लड़ना पड़ा था विवश किन्तु
लौह सनी जीत मुझे कितनी अशुद्ध है
ध्वंश जन्य सुख या कि शत्रु दुःख शान्ति जन्य?
ज्ञान नहीं कौन बात नीति के विरूद्ध है।
जानता नहीं मैं कुरूक्षेत्र में खिला है पुण्य
या महान पाप यहाँ फूटा वन युद्ध है।''

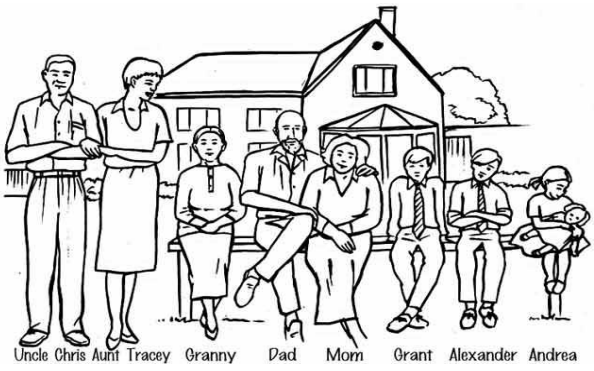

कवि का मानना है कि मानव का ध्येय इस वैज्ञानिक दौड़ धूप में बल्कि प्रेम सेवा आदि सशक्त भावों से ही सम्भव हो सकता है। वे विज्ञानी मानव को सलाह देते हैं–

''सावधान मनुष्य, यदि विज्ञान है तलवार।

तो इसे फेक, तजकर मोह स्मृति के पार।

हो चुका यह सिद्ध, है तू शिशु अभी नादान,

फूल कांटों की तुझे कुछ भी नहीं पहचान।

खेल सकता तू नहीं ले हाथ मे तलवार,

काट लेगा अंग, तीखी है बड़ी वह धार।''

कवि के विचार में मानव की स्थिति अभी भी बच्चों के समान अबोध ईर्ष्या द्वेष से पूर्ण है। अतः उसे परिपक्व करने की आवश्यकता है। सहज मानवीयता की स्थिति परिपक्व हो जाने पर ही एक ऐसे जीवन समाज की संरचना संभव हो सकेगी कि जिसमें श्रम साध्य सभी उपलब्धियों में मानवों का समभाग होगा। तभी शांति सम्भव हो सकेगी। कवि विचारों के अर्न्तद्वन्द्व में उभरने का एकमात्र सहारा आशा को बनाये रखना मानता है। वे कुरूक्षेत्र काव्य में भीष्म पितामह के मुख से युधिष्ठिर को कहलाते हैं–

''आशा के प्रदीप को जलाये चलो धर्मराज,

एक दिन होगी मुक्त भूमि रण नीति से,

भावना मनुष्य की न राग में रहेगी लिप्त,

सेवित रहेगा नहीं जीवन अनीति से,

हार से मनुष्य की न महिमा घटेगी और,

तेज बढ़ेगा किसी मानव को जीत से,

स्नेह बलिदान होंगे मान नरता के एक,

धरती मनुष्य की बनेगी स्वर्ग प्रीति से।''

व्यक्ति के लिए जब समता भावना जैसे अन्य उदात्त गुणों का निर्देश है, तब प्रत्येक व्यक्ति को दूसरे से होने वाले अनाचार या अन्याय के प्रतिकार का अधिकार स्वतः प्राप्त हो जाता है। वेद में 'ऋतम' को सम्पूर्ण व्यवस्था का तत्व निर्धारित किया है। इसीलिए जो राजा अर्थात् अधिकारी न्यायकर्ता है, उसके प्रति कामना की गयी है कि सत्य से असत्य को पृथक करके मेरे राष्ट्र का आधिपत्य प्राप्त करो–

ऋतेन राजन्ननृतं विविञ्चन् मम राष्ट्रस्याधि पत्यमेहि।

उचित न्याय सभी का अधिकार है।

कविवर निराला मानवता के सच्चे पुजारी थे। उनका चिन्तन देशकाल की भिन्नता का विचार न कर सम्पूर्ण मानवता का हितैषी बन गया है और समष्टि की मंगल–कामना हेतु व्यक्ति–व्यक्ति को मानव की पारस्परिक अभिन्नता का नया बोध दे रहा है –

मानव–मानव से नही भिन्न, निश्चय हो श्वेत कृष्ण अथवा/वह नहीं क्लिन्न।।

कवि, मानव समानता का आकांक्षी है और इसी कारण उनकी सम्मति में किसी एक के प्रति प्रतिकार और किसी दूसरे के प्रति प्यार, क्षुद्र सीमा–धर्म हो सकता है, महान् मानव–धर्म नहीं। उनका दृढ़ विश्वास है, व्यक्ति– व्यक्ति में परस्पर भेद के कारण दानवता का अंधकार ही बढ़ा, इसके विपरीत आन्तरिक भावों की एकता वर्ण, जाति, रूप और धर्म से परस्पर भिन्न होते हुए भी मानव–मानव को मिलाने वाली होती है –

'दोनों हम भिन्न वर्ण, भिन्न जाति, भिन्न रूप,
भिन्न धर्म भाव पर केवल 'अपनाव' से प्राणों से एक थे।'

निराला जी वेदांती चेतना के कवि हैं। अतः उन्होंने सर्वत्र मानव–मानव के अभेद का संदेश दिया है। कवि की सम्पूर्ण चिन्तन का मूल 'आत्मवत् सर्वभूतेषु' की पवित्र भावना है। उनका समतावादी मानवतावाद, अन्तः विश्वास, प्रेम, दया, त्याग, परोपकार, श्रद्धा एवं अन्य नैतिक मूल्ययुक्त भावों द्वारा प्राणिमात्र के कल्याणार्थ उदात्त भूमि पर टिका है। मानवाधिकार, मानवीय गरिमा को बचाने, अक्षुण्ण बनाये रखने का बिन्दु है तथा 'देहो देवाल्यो नाम' को सिद्ध करने का मुद्दा है। मानवाधिकार का सम्बन्ध मानव के व्यक्तित्व एवं विकास से जुड़ा है। वास्तविकता तो यह है कि अधिकार व्यक्ति पर राज्य द्वारा किया गया कोई उपकार नही प्रत्युत् उसे जन्मना प्रकृति द्वारा प्राप्त है। मानवाधिकार की भावना मूलतः 'वसुधैव कुटुम्बकम्' पर आधारित है। निराला साहित्य भी 'आत्मवत् सर्वभूतेषु वसुधैव कुटुम्बम्' पर आधृत है, जिसमें सहज ही मानवाधिकार की प्रतिष्ठा को सफल करने की दृष्टि समाहित है।

वास्तव में निराला जी एक ऐसी संस्कृति का निर्माण करना चाहते थे, जिसकी जड़ें विश्ववन्दित् प्राचीन भारतीय संस्कृति में हो और शाखा–प्रशाखायें उन्मुक्त रूप से सर्वत्र विकसित हों। वह स्वामी विवेकानन्द के स्वप्न को साकार बनाना चाहते थे। स्वामी जी ने भेद–भावों तथा तमाम संकीर्णताओं से परे एक शक्तिशाली राष्ट्र और आदर्श विश्व–परिवार की कल्पना की थी। महाप्राण ने स्वयं को इसी पथ का अनुयायी कहा है। अपनी इस समन्वय कारिणी संस्कृति को वह एक नये रूप में निखरी हुई देखना चाहते थे। इसीलिए वे वीणावादिनी से वर माँगते है।–

काट अन्ध–उर के बन्धन–स्तर/बहा जननि, ज्योतिर्मय निर्झर,

कलुष–भेद–तम हर प्रकाश भर/जगमग जग कर दे।

शोषण के विरुद्ध अधिकार मानव के दुर्व्यापार और बेगार तथा इसी प्रकार के अन्य बलात् श्रम को रोकता है। भारतीय समाज में जमींदार, पूँजीपति, राजा, नबाब या अन्य शक्तिशाली या समृद्ध लोग कमजोर तथा गरीबों से बेगार कराते थे और उन्हें मजदूरी भी नहीं देते थे। शोषकों और शोषितों का यथार्थ चित्रण कर क्रांतिकारी निराला ने 'शोषण के विरुद्ध अधिकार' को बढ़ावा दिया है।

कवि निराला की दृष्टि में एक ओर पत्थर तोड़ती हुई नारी है, दूसरी ओर है, 'तरूमालिका, अट्टालिका, प्रासाद' परन्तु कवि स्पष्ट शब्दों में कहता है –

देख मुझे उस दृष्टि से/जो मार खा रोई नहीं।

हिन्दी कविता स्वतन्त्रता, समता और बन्धुत्व की भावना से युक्त मानवीय गुणों को संरक्षण प्रदान करते हुए 'सर्वे भवन्तु सुखिनः की कामना करती है। मानव कल्याण की चिन्ता कवियों को है। वे ऐसे समाज की कल्पना करते है जहां ऊँच–नीच के भेदभाव न हो और नहीं जाति व वर्ग हो, सभी स्वतन्त्र और सुखी हों–

समस्या एक, मेरे सभ्य नगरों ग्रामों में

सभी मानव, सुखी, सुन्दर व शोषण मुक्त कब होगें।

वेद जिस विश्वबन्धुत्व, मानवतावाद और उन्मुक्त राष्ट्रीयता का सन्देश देते हैं। स्वातन्त्र्योत्तर कविता का भी मूल उद्देश्य एक नयी संस्कृति और सभ्यता को जन्म देना है, जो आदमी–आदमी के बीच की दीवारों को तोड़ दे। विश्व की सम्पूर्ण मानवता को एक सूत्र में बांधकर एक ऐसे विश्व की ओर उन्मुख करें जिससे अन्याय का परिष्कार हो सके। इसी भावना को कवि नागार्जुन व्यक्त करते हैं–

विषमता के प्रति घृणा का अनोखा उपहार लो

विश्व मानव के लिए मनुहार लो।

मानवीय समानता में सभी मनुष्य समान हैं उनमें न कोई छोटा है और न कोई बड़ा सभी भातृभाव को धारण करते हुए उन्नति के लिए मिलकर कर्म करते आगे बढ़ते हैं। जब सब समान हैं तो भेदभाव कैसा ऋषि कामना करते हैं कि तुम सबका हृदय सदा प्रेम सहित और विरोध रहित होकर एक समान हों। तुम्हारा मन एक समान हों। जिससे तुम्हारा बल सामर्थ्य एक–दूसरे की सहायता से खूब बढ़ें–

समानी व आकूतिः समाना हृदयानि वः।

समानमस्तु वो मनो पथा वः सुसहासति।।

वेदऋचाओं की ये पंक्तियाँ प्रेम की उच्च भावना को निर्देशित करती है। समभाव का यह महान आदर्श जिसकी आज महती आवश्यकता है। वेदों के अनुसार सभी मानव भाई–भाई हैं जन्म से न कोई छोटा है और न कोई बड़ा। इस समानता के भाव को धारण करते हुए हम सब मिलकर सामाजिक उन्नति के लिए मिलकर प्रयत्न करें।

अज्येष्ठासों अकनिष्ठास एतें संभ्रातरो वावृधुः गया सौभगाय।

समता भावना के माहात्म्य के प्रकाशक वैदिक विचार जहाँ एक ओर समाज की उन्नति के लिए अपेक्षित आधार के अभिव्यञ्जक हैं, वही, वे मानवाधिकार का स्वरूप भी उपन्यस्त करते हैं। स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कविता भी जाति, धर्म, की जंजीरों को तोड़कर समता की बात करती है और यह समता तभी सम्भव है जब सब मिलकर जांति–पांति के दीवारों को तोड़कर एक हो जायें अर्थात् सम्पूर्ण मानवता एक हो जाये। इसीलिए कवि कमजोर वर्ग का आह्वान करता है कि–

मेरे आंखो में सपनों का, एक नया संसार बसा,

मेरी आँखो में समाज का, एक नया आकार बसा।

मेरा आग्रह है समता पर, वर्ग रूग्ण मन स्वस्थ बने,

झुकी कमर, अवनत मस्तक, मानव का सिर उठे तने।

अस्पृश्यता–की कुप्रथा को दूर करने के लिए ही आधुनिक हिन्दी साहित्य 'हृदय में प्रेम की पवित्रता' पर बल देते हैं–सब मानव एक है।

निष्कर्ष

जातिगत एवं धर्मगत भिन्नता कोई भी विभिन्नता नहीं है, सत्य या ईश्वर ही वह रंग है, जो रस के रूप में कृतिकार की आत्मा के भावों की तरंग को पाठक की आत्मा से मिला देता है। अनेक प्राणों में एक ही प्रकार की सहानुभूति, एक ही मधुर राग बज उठता है इन पंक्तियों में सत्य का जो सूत्र है, उससे भारत और इंग्लैण्ड बँधा हुआ है। दोनों आत्माएँ एक हैं, जातिगत कोई भी वैषम्य वहाँ नहीं। ऐसी मानवता जो कि जातिवाद और छुआछूत के ऊँच नीच विचारों पर आधारित न होकर विशुद्ध और सहज मानवीय गुणों पर आधारित होगी।

सन्दर्भः–

1 गुप्त, परमेश्वरी लाल, मौलानादाऊद दलमईकृत चंदायन, हिन्दी ग्रंथ रत्नाकर,1964,दिल्ली, पृ0–307, कड़वक–407

2 गुप्त, परमेश्वरी लाल, कुतुबनकृत मिरगावती, प्रथम संस्करण,1967, वाराणसी, विश्वद्यिालय प्रकाशन, पृ0–335, कड़वक–326

3 शुक्ल, आ0 रामचंद्र, जायसी ग्रंथावली, जयभारती प्रकाशन इलाहाबाद, प्रथम संस्करण 2005, नागमती–वियोग खंड, पृ0–146, दो0–9

4 गुप्त, परमेश्वरी लाल, मौलानादाऊद दलमईकृत चंदायन, हिन्दी ग्रंथ रत्नाकर,1964, दिल्ली, पृ0–307, कड़वक–407

5 गुप्त, परमेश्वरी लाल, कुतुबनकृत मिरगावती, प्रथम संस्करण,1967, वाराणसी, विश्वद्यिालय प्रकाशन, पृ0–335, कड़वक–327

6 शुक्ल, आ0 रामचंद्र, जायसी ग्रंथावली, जयभारती प्रकाशन इलाहाबाद, प्रथम संस्करण 2005, नागमती–वियोग खंड, पृ0–146, दो0–11

7 गुप्त, परमेश्वरी लाल, मौलानादाऊद दलमईकृत चंदायन, हिन्दी ग्रंथ रत्नाकर,1964, दिल्ली, पृ0–308, कड़वक–409

8 गुप्त, परमेश्वरी लाल, कुतुबनकृत मिरगावती, प्रथम संस्करण,1967, वाराणसी, विश्वद्यिालय प्रकाशन, पृ0–336, कड़वक–329

9 कारेल वसक, ह्यूमन राइट्स ए लीगल रियलिटी, दी इंटरनेशनल डायमेन्सन ऑफ ह्यूमन राइट्स खण्ड प्रथम, पृष्ठ 4–10।

10 यूनाइटेड किंगडम एंड ह्यूमन राइट्स, हैमालिन लैक्चर्स

11 कानन, गहराना, ह्यूमन राइट्स, ए कनसेपचुअल प्रोस्पेक्टिव, इण्डियन जनरल ऑफ इण्टरनेशनल लॉ, खण्ड 29, जुलाई–दिसम्बर 1989, पृ. 367

12 अतर, चन्द्र, पालिटिक्स ऑपफ ह्यूमन राइट्स एण्ड लिबर्टी– ए ग्लोबल सर्वे ;1985द्ध पृ. 45।

13 स्वा. भारत में मानवाधिकार–डॉ0 कृष्णमोहन माथुर पृ. 18, 19 ।

14 मनुष्य का जन्म सब जन्म में श्रेष्ठ है।य भारत में विवेकानन्द, पृ. 35

15 अनामिका, निराला, भारतीय भंडार, लीडर प्रेस इलाहाबाद तृतीय संस्करण संवत् 2015, पृ. 18

16 देवी प्रसाद गुप्त, हिन्दी महाकाव्य सिद्धांत और मूल्यांकन, अपोलो पब्लिकेशन, जयपुर, पृ. 331

17. डॉ. सुरेश अग्रवाल, हिन्दी के प्रतिनिधि कवि, साहित्य मंदिर, दिल्ली, प्रथम संस्करण, 2004, पृ. 219

18. देवी प्रसाद गुप्त, हिन्दी महाकाव्य सिद्धांत और मूल्यांकन, पृ. 354